20. भक्ति आंदोलन और तुलसीदास

• राम विलास शर्मा

लेखक परिचय –

अंग्रेजी के प्रोफेसर होकर भी हिंदी के प्रकांड विद्वान डॉ० रामविलास शर्मा का जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले में स्थित उचगाँव सानी में 10 अक्टूबर 1912 को हुआ। आपका निधन 30 मई 2000 को हुआ।

ऋग्वेद और मार्क्स के अध्येता डॉ० रामविलास शर्मा आलोचक, इतिहासवेत्ता और भाषाविद् होने के साथ–साथ एक अच्छे कवि भी थे। इन्होंने 100 से अधिक पुस्तकें लिखीं, जिनमें 'हिंदी जाति का साहित्य', 'भारतीय संस्कृति और हिंदी प्रदेश', 'निराला की साहित्य साधना', 'पश्चिमी एशिया और ऋग्वेद', 'भारत में अंग्रेजीराज और मार्क्सवाद', 'परंपरा का मूल्यांकन', 'भारतीय साहित्य की भूमिका', 'आस्था और सौंदर्य', 'भाषा, साहित्य और संस्कृति' आदि प्रमुख हैं। अज्ञेय द्वारा संपादित 'तार सप्तक (1943 ई०)' में एक कवि के रूप में आपकी रचनाएँ बहुत चर्चित हुईं।

पाठ परिचय –

भक्ति आंदोलन भारतीय सांस्कृतिक इतिहास की एक अनोखी घटना है, जो वैश्विक इतिहास में दुर्लभ है। यह भक्ति आंदोलन ही था, जिसने भारतीयों को भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता के सूत्र में बाँधा।

रामविलास शर्मा की दृष्टि में तुलसीदास भारत के श्रेश्ठ भक्त कवि हैं क्योंकि तुलसी ने भक्ति के आधार पर जन-साधारण के लिए धर्म को सरल और सुलभ बनाकर पुरोहितों के धार्मिक अधिकार की जड़ें हिला दीं। तुलसी मानवीय करुणा के कवि हैं जिन्होंने कोल, किरात, आभीर, जवन, खस, श्वपच आदि सभी अन्त्यजों और अछूतों को भक्ति का उत्तराधिकारी माना। तुलसी का साहित्य निष्क्रियता का साहित्य नहीं है, और यह जीवन की अस्वीकृति का साहित्य भी नहीं है।

भारत के नए जागरण का कोई महान् कवि भक्ति आंदोलन और तुलसीदास से पराङ्मुख होकर नहीं रह सकता।

डॉ० रामविलास शर्मा जैसे प्रगतिवादी समालोचकों द्वारा गोस्वामी तुलसीदास की प्रशंसा और स्वीकार्यता तुलसी के लोकनायक, कालजयी और शाश्वत कवि होने का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

मूल पाठ –

तुलसीदास भारत के श्रेष्ठ भक्त कवि, भक्ति-आंदोलन के निर्माता, उसी भक्ति-आंदोलन की महान् उपलब्धि हैं। उनके साहित्य का सामाजिक महत्त्व भक्ति-आंदोलन के सामाजिक महत्त्व पर निर्भर है, उससे पूरी तरह संबद्ध है।

भक्ति-आंदोलन अखिल भारतीय है। देश और काल की दृष्टि से ऐसा व्यापक सांस्कृतिक आंदोलन संसार में दूसरा नहीं है। ईसा की दूसरी शताब्दी में ही आंध्रप्रदेश में कृष्णोपासना के चिह्न पाए जाते हैं। गुप्त सम्राटों के युग में विष्णुनारायण-वासुदेव की उपासना ने अखिल भारतीय रूप ले लिया।

पाँचवीं शताब्दी से लेकर नवीं शताब्दी तक तमिलनाडु भक्ति-आंदोलन का प्रमुख स्रोत रहा। आलवार संतों की कीर्ति सारे भारत में फैल गई। कश्मीर में लल देव, तमिलनाडु में आंदाल, बंगाल में चंडीदास, गुजरात में नरसी मेहता – भारत के विभिन्न प्रदेशों में भक्त कवि लगभग डेढ़ हजार वर्ष तक जनता के हृदय को अपनी अमृतवाणी से सींचते रहे।

यह भक्ति–आंदोलन ब्रह्मदेश, अफगानिस्तान और ईरान की सीमाओं पर जाकर रुक जाता है; सिन्ध, कश्मीर, पंजाब, बंगाल, महाराष्ट्र, आंध्र, तमिलनाडु आदि प्रदेशों पर भक्ति-आंदोलन की धारा पूरे वेग से बहती है। भक्त-कवियों ने विभिन्न प्रदेशों को राष्ट्रीय एकता के सूत्र में बाँधने में कितना बड़ा काम किया, उसका मूल्य आँकना सहज नहीं है। उनके पास राजनीतिशास्त्र के कोई ऐसे परिचित सूत्र नहीं थे, जिन्हें वे आये दिन दोहराते हुए जनता को एकताबद्ध करते। उन्होंने भावात्मक रूप से जनता को एक किया। इस भावात्मक एकता में मुख्य भाव था भक्ति का।

उस समय दैनिक-समाचार पत्र नहीं थे, साप्ताहिक और मासिक पत्र नहीं थे। प्रचार की सुविधाओं के लिए रेडियो नहीं था। आज ये सब साधन सुलभ हैं। किंतु क्या आज भारतीय जनता में – विशेष रूप से जनता के नेताओं में, उनकी पार्टियों में – वह भावात्मक एकता है, जो तुलसी के युग में थी ?यह प्रश्न करने से ही भक्ति-आंदोलन के राष्ट्रीय महत्त्व का ज्ञान हो जाएगा।

सम्भवतः तुलसीदास के युग में विभिन्न प्रदेशों के साहित्यकार एक-दूसरे की विचारधाराओं से जितना परिचित थे, उतना आज नहीं हैं। इधर विभिन्न भाषाओं के साहित्यिक आंदोलनों को लेकर अनेक शोध ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं। इनसे यह स्पश्ट होता जा रहा है कि हिंदी तथा अन्य भाषाओं के भक्ति साहित्य में जो समानताएँ दिखायी देती हैं, वे आकस्मिक नहीं हैं। वे इतर प्रदेशों के साहित्य से परिचित होने का फल है।

भक्ति-आंदोलन से जो भावात्मक एकता स्थापित हुई, उसमें जितना फैलाव था, उतनी गहराई भी थी। यह एकता समाज के थोड़े से शिक्षितजनों तक सीमित नहीं थी। संस्कृत के द्वारा जो राष्ट्रीय एकता कायम हुई थी, उससे यह भिन्न थी। यह एकता प्रादेशिक भाषाओं के माध्यम से कायम हो रही थी। भक्ति-आंदोलन एक ओर अखिल भारतीय आंदोलन था, दूसरी ओर वह प्रदेशगत, जातीय आंदोलन भी था। देश और प्रदेश एक साथ; राष्ट्र और जाति दोनों की सांस्कृतिक धाराएँ एक साथ। भक्ति-आंदोलन की व्यापकता और सामर्थ्य का यही रहस्य है।

जो लोग समझते हैं कि अंग्रेजों के आने से पहले यहाँ राष्ट्रीय एकता का अभाव था, उन्हें भक्ति–आंदोलन के इस अखिल भारतीय स्वरूप पर विचार करना चाहिए।

भलि भारत भूमि, भले कुल जन्म, समाज सरीर भलो लहि कै।
जो भजै भगवान सयान सोई तुलसी हठ चातक ज्यों गहि कै।।

यह उक्ति तुलसीदास की है।

अनेक विद्वान मानते हैं कि राश्ट्रीय एकता का ही नहीं, जनतंत्र का पाठ भी अंग्रेजों ने ही हमें पढ़ाया। अंग्रेज न आते, तो यहाँ के लोग संकीर्ण जातिवाद में फँसे रहते। इन विद्वानों को विचार करना चाहिए कि भक्ति–आंदोलन में इतने जुलाहे, दर्जी, नाई आदि इतर वर्णों के लोग कैसे सिमट आए ? आज

कल विश्वविद्यालयों में और साहित्य में कितने अध्यापक और लेखक हैं जो द्विजेतर वर्णों के हैं।

संभवतः जातिप्रथा जितनी दृढ़ आज है, उतनी नामदेव दर्जी, सेना नाई, चोखा महार, रैदास और कबीर जुलाहे के समय में न थी। और जातिवाद संकीर्णता जितनी शिक्षितजनों में है, सम्भवतः उतनी सूर और कबीर के पद गाने-वाले अपढ़ जनों में नहीं है। वर्णाश्रम धर्म और जातिप्रथा की जितनी तीव्र आलोचना भक्ति–साहित्य में है, उतनी आधुनिक साहित्य में नहीं है।

यहाँ पर आपत्ति की जा सकती है कि मैं भक्ति-आंदोलन को बहुत व्यापक अर्थ दे रहा हूँ। भक्त और संत अलग थे; इन दोनों से भिन्न प्रेममार्गी कवि थे। इन सबको एक आंदोलन में शामिल करना अनुचित है।

इसका उत्तर यह है कि स्वयं भक्त और संत कवि भक्तों और संतों में वैसा भेद न करते थे जैसा आलोचक करते हैं। 'संत सभा चहुँ दिसि अँबराई। श्रद्धा रितु बसन्त सम आई।' सन्तसभा अनुपम अवध, सकल सुमंगल मूल।' 'बन्दउ सन्त समान चित, हित अनहित नहिं कोइ।' तुलसीदास की इन उक्तियों से देखा जा सकता है कि सन्त और भक्त शब्द उनके लिए पर्यायवाची है। उधर कबीर की उक्ति है :

सहजै सहजै मेला होयगा, जागी भक्ति उतंगा।
कहै कबीर सुनो हो गोरख चलौ गीत के संगा।।

कबीर भी सन्त और भक्त में भेद नहीं करते।

मलिक मुहम्मद जायसी वेद-पुराण और कुरान सभी का आदर करते थे।

'वेद-पन्थ जे नहिं चलहिं, ते भूलहिं बन माँझ।' यह उक्ति जायसी की है। पुराणों के बारे में लिखा था, 'एहि बिधि चीन्हहु करहु गियानू। जस पुरान महँ लिखा बयानू।' प्रेम-ज्ञान–वैराग्य निर्गुण-सगुण आदि के भेदभाव उस समय अवश्य थे, किन्तु वे सब एक व्यापक आंदोलन के अन्तर्गत थे। ये भेद उतने महत्त्वपूर्ण न थे, जितने कुछ आलोचकों को आज वे लगते हैं।

निराला जी ने अपने अनेक निबंधों में प्रतिपादित किया है कि गोस्वामी तुलसीदास मूलतः रहस्यवादी थे। उनकी इस स्थापना के पीछे यह बोध था कि कबीर, जायसी, सूर और तुलसी की चेतना का एक सामान्य स्तर है। यह 'रहस्यवाद' का सामाजिक महत्त्व असाधारण है। यह रहस्यवाद अद्वैत ब्रह्म के साक्षात्कार का दावा करके अनेक धर्मों और मतों के परस्पर विद्वेश का खण्डन करता था। वह उच्च वर्णों के कर्मकाण्डी धर्म के स्थान पर लोकधर्म की स्थापना करता था। इस लोकधर्म का आधार था प्रेम। कबीर, तुलसी, जायसी आदि कवि रहस्यवादियों के समान ज्ञान-नेत्र खुलने, आनन्द से विह्वल होने की बातें करते हैं और इस आनन्द को वे मानव-प्रेम से जोड़ देते थे।

जायसी ने लिखा था :

सैयद असरफ पीर पियारा। जेहि मोहिं पन्थ दीन्ह उजियारा।
लेसा हिये प्रेम कर दिया। उठी जोति भा निरमल हिया।।

जायसी के ज्ञान-नेत्र खुले; उन्हें जो प्रकाश दिखायी दिया, वह प्रेम का प्रकाश था। तुलसी ने लिखा

अस मानस मानस चख चाही। भइ विबुद्धि विमल अवगाही।
भयउ हृदय आनन्द उछाहू। उमगेउ प्रेम प्रमोद प्रबाहू।।

यहाँ भी ज्ञान-नेत्र खुलने की बात है। जो प्रकाश दिखायी देता है, उसमें प्रेम प्रवाह ही उमगता है। यही प्रेम की भावात्मक एकता कबीर, सूर, जायसी और तुलसी को एक सामान्य भावभूमि पर ला खड़ा करती है। तुलसी के उपास्य देव को कर्मकाण्ड नहीं, प्रेम ही प्रिय है :

रामहिं केवल प्रेम पियारा। जानि लेउ जो जाननिहारा।।

यही प्रेम तत्त्व मानव-समाज को एक सूत्र में बाँधने वाला है।

आधुनिक काल में जड़ और चेतन, सगुण और निर्गुण, ज्ञान और भक्ति का भेद आलोचकों के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण हो गया है। तुलसी के युग में भी इस तरह के भेद थे, किंतु तुलसीदास तथा अन्य कवियों का प्रयत्न इन भेदों को दूर करने की ओर था, उन्हें दृढ़ करने के लिए नहीं।

जायसी ने लिखा था :

परगट गुपुत सो सरब बिआपी। धरमी चीन्ह, न चीन्है पापी।।

गोस्वामीजी ने इसीके के समकक्ष लिखा था :

अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा। अकथ अगाध अनादि अनूपा।
एक दारुगत देखिय एकू। पावक सम जुग ब्रह्म विवेकू।।

निर्गुण और सगुण परस्पर विरोधी नहीं है। एक ही सत्ता, व्यक्त और अव्यक्त, दोनों है। कबीर की उक्ति है :

तहं चेत–अचेत खम्भ दोउ मन रच्या है हिण्डोर।
तहँ झूलैं जीव जहान जहँ कतहूँ नहिं थिर ठौर।।

कबीर-जायसी-तुलसी की एक सामान्य दार्शनिक भूमि है, उसी के अनुरूप उनके साहित्य की सामाजिक विषयवस्तु में बहुत बड़ी समानता है।

भक्ति-आंदोलन अखिल भारतीय सांस्कृतिक आंदोलन था। इस आंदोलन की श्रेश्ठ देन थे, तुलसीदास। उन्होंने निर्गुण-पंथियों और सगुण-मतावलम्बियों को एक किया, उन्होंने वैश्णवों और शाक्तों को मिलाया। उन्होंने भक्ति के आधार पर जनसाधारण के लिए धर्म को सरल और सुलभ बनाकर पुरोहितों के धार्मिक अधिकार की जड़ें हिला दीं। तुलसीदास मानवीय करुणा के अन्यतम कवि हैं। उनके राम दीनबन्धु हैं। 'सबरी गीध सुसेवकनि, सुगति कीन्ह रघुनाथ।' वनवासी कोलकिरात राम के दर्शन से प्रसन्न होते हैं। 'आभीर जवन किरात खस श्वपचादि' सभी राम के स्मरण से मोक्ष–लाभ करते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास ने राम को उपास्य मानकर आस्था का भवन निर्मित किया था। किन्तु कष्ट सहते-सहते एक बार तुलसीदास की आस्था भी डिग गयी थी। उन्होंने क्षुब्ध होकर लिखा था :

कियो न कछू, करिबो न कछू, कहिबो न कछू, मरिबो ही रह्यो है।

इससे उनके मर्मान्तक कष्ट की कल्पना की जा सकती है।

भक्ति-साहित्य निराशाजन्य साहित्य नहीं है, यद्यपि उसमें निराशा भी है। यह स्थापना कि मुसलमानों के शासनकाल में पराधीनता के कारण लोग भक्ति और निराशा के गीत गाने लगे, अवैज्ञानिक है। भक्ति-आंदोलन तुर्क आक्रमणों से पहले का है। गुप्त सम्राटों के युग में ही वैष्णव मत का प्रसार होता है,

तमिलनाडु भक्ति-आंदोलन का केन्द्र रहा, जहाँ मुसलमानों का शासन न था। स्वयं अनेक मुस्लिम संतों ने इस आंदोलन में योग दिया।

भक्ति-आंदोलन विशुद्ध देशज आंदोलन है। वह सामन्ती समाज की परिस्थितियों से उत्पन्न हुआ था; वह मूलतः इस सामन्ती समाज–व्यवस्था से विद्रोह का साहित्य है।

तुलसी-साहित्य एक ओर आत्मनिवेदन और विनय का साहित्य है, दूसरी ओर वह प्रतिरोध का साहित्य भी है। हमारे समाज पर गोस्वामी तुलसीदास का इतना गहरा प्रभाव है कि आज यह कल्पना करना कठिन है कि तुलसीदास ने अनेक प्रचलित मान्यताएँ अस्वीकार करके यह साहित्य रचा था। वे राम के सम्मुख ही विनम्र और करुण स्वर में बोलने वाले कवि हैं, औरों के आगे सर हमेशा ऊँचा रखते थे। वे आत्मत्याग करने वाले को सर्वश्रेश्ठ व्यक्ति मानते हैं। भक्त के पास अपना कुछ नहीं होता, इसलिए – 'राम ते अधिक राम कर दासा।'

सामन्ती समाज के साहित्य की सबसे बड़ी कमजोरी होती है – निष्क्रियता। तुलसी का साहित्य निष्क्रियता का साहित्य नहीं है। धनुर्धर राम रावण का वध करने वाले पुरुषोत्तम हैं। तुलसी का साहित्य जीवन की अस्वीकृति का साहित्य नहीं है। वे उन लोगों का मज़ाक उड़ाते हैं जो काम, क्रोध के भय के मारे रात को सो नहीं पाते – 'जागैं जोगी जंगम जती जमाती ध्यान धरैं उर भारी लोभ मोह कोह काम के।' केवल राम का भक्त चैन से सोता है – 'सोवै सुख तुलसी भरोसे एक राम के।' काम, क्रोध, मद लोभ, बुरे हैं, किन्तु आवश्यक भी। भेद है मर्यादा का। यूरुप के सन्तों की तरह तुलसी को स्वर्ग का मोह नहीं है, न उन्हें नरक का भय है। उनके राम अपनी जन्मभूमि को स्वर्ग से भी अधिक प्यार करते हैं।

जद्यपि सब बैकुण्ठ बखाना। वेद पुरान विदित जग जाना।
अवध सरिस प्रिय मोहिं न सोऊ। यह प्रसंग जानै कोउ कोऊ।।

तुलसीदास ने जो राम में जो जन्मभूमि का प्रेम, निर्धन और परित्यक्त जनों के प्रति प्रेम चित्रित किया है, वह आकस्मिक नहीं है। स्वयं उनके हृदय में जो प्रेम-प्रमोद-प्रवाह उमगा था, वही राम में साकार हो गया है। उन्होंने कहा भी था – 'जाकी रही भावना जैसी। प्रभु मूरति देखी तिन तैसी।' तुलसीदास ने भी अपनी भावना के अनुसार राम को प्रेममय, अपार करुणामय देखा है। 'रामचरितमानस' के राम वाल्मीकि, कालिदास, भवभूति अन्य सभी कवियों के रामों से भिन्न हैं। वे तुलसी के राम हैं। उनमें हमें स्वयं तुलसीदास की मानवीय छवि दिखायी देती है। इन करुणामय राम में कहीं तुलसी का चुनौती वाला स्वर सुनायी देता है :

देव दनुज भूपति भट नाना। समबल अधिक होई बलवाना।
जौं रन हमहिं प्रचारै कोऊ। लरहिं सुखेन काल किन होऊ।।

कहीं इनमें तुलसी की परिहासप्रियता दिखायी देती है :

'राम मात्र लघु नाम हमारा। परसु सहित बड़ नाम तोहारा।।'

लक्ष्मण में यही परिहासप्रियता कुछ अधिक मात्रा में चित्रित की गई है। उसी प्रकार उनमें क्रोध की मात्रा अधिक है। 'विनयपत्रिका' के तुलसी की छाप भरत के चरित्र पर है। तुलसी ने जैसे समस्त संसार को सियाराममय देखा था, वैसे ही 'रामचरितमानस' के हर पात्र में तुलसी के मानस का कुछ-न-कुछ अंश

विद्यमान है।

तुलसी का काव्य लोक-संस्कृति का अभिन्न अंग बन गया है। उनके नाम के साथ कोई पन्थ नहीं जुड़ा है। 'रामचरितमानस' को लोकप्रिय बनाने के लिए कोई संघबद्ध प्रयास नहीं किया गया। अपने आप मिथिला के गाँवों से लेकर मालवे की भूमि तक जनता ने इस ग्रंथ को अपनाया। करोड़ों हिन्दी भाषियों के लिए धर्मग्रंथ, नीतिग्रन्थ, काव्यग्रन्थ यदि कोई है तो 'रामचरितमानस' है। इसका एक अप्रत्यक्ष सामाजिक फल यह हुआ है कि हिंदी भाषी जनता को संगठित करने में, उसमें जातीय एकता का भाव उत्पन्न करने में 'रामचरितमानस' की अपूर्व भूमिका रही है। आश्चर्य की बात है कि जिन जनपदों में गाँवों में तुलसी और सूर की रचनाओं का पाठ शताब्दियों से होता रहा है, उनके कुछ अभिनव नेता और बुद्धिजीवी अपने को हिन्दी भाषी क्षेत्र से अलग मानते हैं।

भक्ति-आंदोलन और तुलसी–काव्य का राष्ट्रीय महत्त्व यह है कि उनसे भारतीय जनता की भावात्मक एकता दृढ़ हुई।

भक्ति-आंदोलन और तुलसी-काव्य का अन्यतम सामाजिक महत्त्व यह है कि इनमें देश की कोटि-कोटि जनता की व्यथा, प्रतिरोध भावना और सुखी जीवन की आकांक्षा व्यक्त हुई है। भारत के नए जागरण का कोई महान् कवि भक्ति–आंदोलन और तुलसीदास से पराङ्मुख नहीं रह सकता। वह सांस्कृतिक धारा रवीन्द्रनाथ और निराला के साहित्य में अविच्छिन्न रूप से प्रवाहित है। इस तथ्य की पुष्टि के लिए यहाँ रवीन्द्रनाथ की 'सूरदासेर प्रार्थना' और निराला की 'तुलसीदास' कविताओं का उल्लेख करना ही यथेष्ट होगा।

•••

शब्दार्थ –

द्विजेतर – गैर ब्राह्मण / अद्वैत – परम ब्रह्म और जीव के कोई अंतर नहीं देखने वाला सिद्धांत / जवन – यवन / देशज – स्थानीय / अविच्छिन्न – निरंतर।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. स्वतंत्रता आंदोलन से अलग भारत का सर्वाधिक प्रसिद्ध आंदोलन है ?

   (क) मुस्लिम आंदोलन (ख) खिलाफत आंदोलन

   (ग) भक्ति आंदोलन (घ) अंग्रेजी आंदोलन ( )

2. तुलसी के आराध्य देव कौन थे ?

   (क) श्री राम (ख) महादेव

   (ग) श्रीकृष्ण (घ) विष्णु ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. डॉ० रामविलास शर्मा के अनुसार भारत का श्रेश्ठ भक्त कवि कौन है ?
2. भारतीयों को भावात्मक और राश्ट्रीय एकता में बाँधने वाला प्रमुख आंदोलन कौन–सा था?
3. तुलसी साहित्य को कोई एक अन्य नाम दीजिए।

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. भक्ति आंदोलन के प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।
2. भक्ति आंदोलन से भारत की भावात्मक एकता कैसे मजबूत हुई ?
3. तुलसी की कोई चार रचनाओं के नाम लिखिए।

निबंधात्मक प्रश्न –

1. भक्ति आंदोलन में तुलसी का योगदान विषयक विवेचना कीजिए।
2. भक्ति आंदोलन ने भारत में जातिवाद को छिन्न–भिन्न कर दिया, समझाइए।
3. भक्ति आंदोलन की वर्तमान प्रासंगिकता बताइए।
4. निम्नलिखित गद्यांश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –

   (क) भक्ति आंदोलन .....अमृतवाणी से सींचते रहे।

   (ख) सम्भवतः जाति प्रथा .....साहित्य में नहीं है।

   (ग) भक्ति आंदोलन अखिल .....मोक्ष–लाभ करते हैं।

   (घ) तुलसी का काव्य .....अलग मानते हैं।

•••